P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-3* (Part-1) November- 2018
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

कथाकार शिवमूर्ति और त्रिशूल

मंजुला शर्मा
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग,
टी. डी. बी. कॉलेज,
रानीगंज

सारांश

भारतीय समाज कई धर्म, जाति और भाषा से निर्मित है। तथा धर्म में अध्यात्म, नैतिकता एवं धार्मिक विधि विधान निहित होते हैं। प्राचीन काल से हमारे साहित्यकारों ने युग विशेष में नफरत और हिंसा के वातावरण में प्रेम और सौहार्द का संदेश दिया है। भारतवर्ष में राजतंत्र और साम्राज्यवाद के विध्वंस के बाद लोकतंत्र की स्थापना हुई और साम्राज्यवाद के विध्वंस के बाद लोकतंत्र की स्थापना हुई और साथ ही विकसित हुई लोकतांत्रिक राजनीति की। सत्ता की राजनीति धर्म की ओट में राजनीतिक स्वार्थ साधना चाहती है। हमारे देश में भी अर्थ का राजनीतिक उद्देश्य से इस्तेमाल शुरू कर विभिन्न धर्मावलंबियों के बीच विद्वेष और हिंसा के बीज बोये जाने लगे, और साम्प्रदायिकता नामक एक विकृत मानसिकता को पोषित किया गया। जबकि भारतीय समाज का विकास अशोक और अकबर के उदार धार्मिक दृष्टिकोण से हुआ था। भारत शान्ति, अहिंसा और सहिष्णुता के लिए जाना जाता रहा जो अब धार्मिक कटुता, वैमनाथ और हिंसा की रणभूमि में बदल चुका है।

मनुष्य का धर्म से लगाव सहज स्वभाव है। किन्तु यह धार्मिकता जब विवेकशून्य होकर अंधी हो जाती है तो साम्प्रदायिकता का जन्म होता है और यह उतना ही पुराना है जितना धर्म। वर्तमान दौर में पूँजीवाद, आर्थिक विभाजन और वर्ग संघर्ष इसे विशेष प्रभावित करने वाले तत्व हैं। साम्प्रदायिकता संगठित स्तर पर कार्य कर सम्प्रदायवाद को जन्म देता है। जागरुक कथाकार इसकी रचनात्मकता को केन्द्र में रखकर लेखन में जुटते हैं। यशपाल का 'झूठा–सच' भैरव प्रसाद गुप्त का 'सती मैया का चौरा', राही मासूम रजा का 'आधा गॉव', भीष्म साहनी का 'तमस', अब्दुल बिस्मिल्लाह का 'झीनी–झीनी बीनी चदरिया' ऐसे ही अभिव्यक्ति के उपन्यास हैं। इस क्रम में शिवमूर्ति रचित 'त्रिशूल' उपन्यास अपने तरह की संवेदना को व्यक्त करता है।

मुख्य शब्द : धर्म, जाति, साम्प्रदायिकता, दंगे, लोकतंत्र, मानवता।

प्रस्तावना

कथाकार शिवमूर्ति के 'त्रिशूल ' उपन्यास का केन्द्रीय पात्र हैं 'महमूद'। 'महमूद' यानी मुहल्ले भर के लोगों का 'चेलवा'। रविभूषण के शब्दों में 'त्रिशूल' महमूद को केन्द्र में रखकर लिखा गया उपन्यास है। शास्त्री जी महमूद को 'चेला', 'चेलवा' और काम निकालने के लिए 'बेटा' भी कहते हैं। उससे समय–समय पर अपना काम भी कराते हैं। नैरेटर और शास्त्री जी में अन्तर है। दोनों दो छोरों पर है। नैरेटर के यहॉ तर्क है और शास्त्री जी के यहॉ आस्था।''[1] शिवमूर्ति ने इस उपन्यास में साम्प्रदायिकता, जातिवाद और आरक्षण जैसे देशव्यापी प्रसंगों को उकेरने का प्रयास किया है। अयोध्या के बाबरी मस्जिद ध्वंस की घटना के बाद रचित कथा–निमिर्ति। मंजुला राणा के अनुसार ''अमूमन साम्प्रदायिकता को राजनीति के साथ ही धर्म से भी जोड़कर देखा जाता है, परंतु साम्प्रदायिकता धर्म से उत्पन्न नहीं होती। यह उत्पन्न होती है घोर आर्थिक विषमता और सामाजिक अन्याय पर आधारित व्यवस्था से।[2]'' महमूद धर्म से मुसलमान है जिसे बाल्यावस्था में ही लम्बे परिवार का बोझ संभालने में असमर्थ बृद्ध पंगु पिता लेखक को इन शब्दों के साथ सुपुर्द करते हैं'' ले जाइए, जिस लायक है खटेगा। दो रोटी खाएगा और पड़ा रहेगा। बड़ा हो जाएगा तो कहीं हिल्ले से लगा दीजिएगा। अपना पेट पालेगा। आपका गुन गाएगा।[3]'' त्रिशूल उपन्यास की रचना पर रविभूषण का विचार देखें तो ''शिवमूर्ति का पहला उपन्यास 'त्रिशूल' (1993 के हंस के दो अंकों में प्रकाशित) है। 6 दिसम्बर 1992 की घटना के बाद लिखित उपन्यास। इस उपन्यास में साम्प्रदायिकता और जातिवाद को एक साथ रखा गया है। इन दोनों के पीछे राजनीति है।[4]''

मुसलमान महमूद हिन्दू के घर में पलता बढ़ता है, रसोईघर और पूजा पाठ में उसकी सक्रिय भागीदारी है। वह रोजा रखता है।

लेखक की पत्नी रोजा में उसकी मदद करती है। बच्चे महमूद के साथ स्कूल जाते उसे भाईजान पुकारते हैं। वह मुहल्ले भर की जनसेवा करता है। मंदिर–मस्जिद का मुद्दा गहराते ही साम्प्रदायिक और जातिवाद की भावना अपना फन फैलाने लगती है। और महमूद 'महँगू' सुनाई देता था। पाल साहब की पत्नी के साथ मुहल्ले की स्त्रियों का संवादः–

''रोजा?'' मिसराइन टोकती है, ''किसके रोजा–नमाज की बात कर रही हो ''इसी अपने महमूद की! गाय देखनेवाला लड़का है जो।''

''ई मुसलमान है?''

''लेव। आपको अबही तक यही नहीं मालूम?''

''इसमें छिपाने की कौन–सी बात है?'' पत्नी थोड़ी नाराजगी दिखाती है,'' रोज तो आपके सामने बीस दफे उसका नाम लेकर बुलाया जाता था। महमूद–महमूद। आप सुनती नहीं थी क्या?''

''पता नहीं। मुझे तो 'महँगू' सुनाई देता था।[5]''

कृत्यांश षेरमों 'अपना मोर्चा' कॉलम में लिखते हैं ''मुझे नहीं लगता कि हमारे देश में ऐसी भी कोई जगह होगी, जहॉ कोई किशोरावस्था की दहलीज लाँघता महमूद किसी हिन्दू के घर में इस प्रकार से जुड़ा होगा। रोजगार की मजबूरी में इसे किसी महमूद ने स्वीकार कर लिया हो तो भी वह कैसे सम्भव है कि गाँव के परिवेश में रहने वाला कोई हिन्दू मनुवादी परम्परा के अनुसार जो मूर्ति–पूजा में आस्था रखता हो, वह किसी मुसलमान लड़के से पूजा–पाठ में ऐसा सहयोग लेता होगा।[6]''

यह तो बात हुई नैरेटर और उसके घर में पले बढ़े महमूद की, जो अब चेलवा से म्लेच्छ, काफिर बनाया जा चुका है, शास्त्री जी बयान करते हैं ''आपने अपनी आस्तीन में साँप पाल रखा है जो कमी भी आपको, आपके परिवार को डँस सकता है।[7]''

शास्त्री जी की पार्टी (रामवादी पार्टी) ने मस्जिद पर केसरिया ध्वज फहराया और मुहल्ले भर में लड्डू बाँटी गयी। साथ ही महमद को मुहल्ले का खतरा और पाकिस्तानी एजेंट घोषित किया गया। शास्त्री जी के पोते को अगवा करने के आरोप में पुलिस उसे लाठी से पीटते हुए घसीटते हुए ले जाती है। लेखक उपन्यास का आरम्भ इस दृश्य से इन पंक्तियों द्वारा करते हैं ''कहाँ से शुरू करूँ महमूद की कहानी? शिवमूर्ति का 'महमूद' एक व्यक्ति नहीं बल्कि वह उस जैसे सभी महमूद की गाथा है। लेखक महमूद को छुड़ाने थानेदार, जिलाधिकारी, जज, एस. पी. सबके पास जाता है और व्यक्तिगत सम्बन्ध और सिफारिश द्वारा वह सफल भी होता है किन्तु क्या वे सचमुच महमूद को छुड़ाने में सफल होते हैं उसकी सुरक्षा कर पाते हैं? लेखक दिल दहला देने वाली घटना का वर्णन करते हैं जब पुलिस महमूद से सवाल–जवाब करती है। साम्प्रदायिक दंगे अब भड़कने लगते हैं। प्रो0 मंजुला राणा लिखती हैं, सत्ता की राजनीति, वोट बैंक बनाने और खोने की राजनीति ने साम्प्रदायिकता के उभार में कितनी अहम भूमिका निभायी है, इसे आजादी के बाद के पूरे दौर में देखा जा सकता है।[9] ''मुहल्ले में दरजी की झोंपड़ी काली जमीन जलाई जाती है और रातोंरात उसे हनुमान जी के परिसर में मिला लिया जाता है। शास्त्री जी का 'अपहृत' पोता ननिहाल से लौट आता है। जबकि महमूद घर जाकर भी अपने घर नहीं पहुँच पाता ''महमूद के अब्बा ने लिखा है महमूद के नाम। लिखा है कि दंगे में इक्का और घर जला दिया गया। घोड़ी 'वे' लोग जबरन हाँक ले गये। पचीसों घर हिन्दुओं के बीच दो घर मुसलमान के जान का खतरा पैदा हो गया था। हम लोग लखनऊ भाग आए हैं। अभी कोई पक्का 'ठीहा' नहीं मिला। मिलते ही दर–मोकाम लिखेंगे।''[10]

तो महमूद कहाँ जाता है क्या वह उपन्यास में आये 'काला पहाड़' का शागिर्द बना लिया जाता है? लेखक ने उपन्यास के अन्तिम पन्ने में प्रश्न किया है ''तब किस घर गया होगा महमूद? कही' नियति को यही तो मंजूर नहीं कि वह किसी न किसी 'काला पहाड' की शागिर्दी करे?[11]''

'त्रिशूल' के पाठ पर संजय राय का वक्तव्य है' यह काल इन्हीं सामाजिक संघर्ष और झंझावातों को समर्पित था। ऊपरी सतह पर 'धार्मिक संघर्ष' और 'परम्परा प्रेम' के अन्तर में संसाधनों पर कब्जे की होड़ चल रही थी। 'मण्डल कमीशन की रिपोर्ट' लागू करना और 'राम–जन्मभूमि पर मन्दिर का निर्माण करना'– यह दोनों प्रश्न राष्ट्र को उद्वेलित कर रहे थे।[12]''

वर्तमान जीवन में धर्म केवल आस्था, विश्वास, प्रतीक, कर्मकाण्ड तक ही सीमित नहीं रही। आज समाज में इसकी भूमिका को नये सिरे से देखने की आवश्यकता है। साम्प्रदायिकता धर्म का एक खण्डित रूप होता है, यह संकीर्ण मानसिकता की उपज होती है जो मन में दुराव, छल, कपट, विद्वेष, कट्टरता, घृणा, अलगाव के बीज बोती है। धर्म के सम्बन्ध में सच्ची समझ और वैज्ञानिक दृष्टिकोंण जरूरी है। साम्प्रदायिकता के संदर्भ में दत्तात्रय मुरूमकर कहते हैं'' साम्प्रदायिकता उन लोगों में होती है जो अपने धर्मानुयायियों में घोर संकीर्ण महत्वाकांक्षाओं को पैदा करते हैं और दूसरे धर्म–समूह को अपने आचरण, रीति–रिवाज, रहन–सहन, खान–पान, वेशभूषा, विचार–आस्था के आधार पर अपने आचरण–विचार के विपरीत सिद्ध करते हैं अर्थात् वैमनस्य की विचारधारा फैलाते हैं।[13]''

साम्प्रदायिक वैमनस्य को धार्मिक कट्टरता और अफवाहें खूब बढ़ावा देते हैं। अफवाहें, आशंका, अविश्वास और दहशत फैलाते है फलस्वरूप मार–काट आगजनी की लीला होती है।

शिवमूर्ति अफवाहों को कुछ इस प्रकार चित्रित करते हैं ''इन भक्तों के अनुसार भारत पाक विभाजन के समय भी ऐसी भयानक मार–काट क्या हुई रही होगी, जैसी अयोध्या से लौटने के रास्ते में होती हुई वे देखते आ रहे हैं। रास्तों में पड़ने वाले मन्दिर टूट रहे हैं। मूर्तियाँ अपवित्र की जा रही हैं। मुस्लिमों की दंगाई भीड़ रात में इन्हें तोड़ते हुए आगे बढ़ रही हैं। दिन में मुसलमानी गावों में शरण ले रही हैं। दो ही चार दिन में वे यहाँ तक पहुँच रहे हैं। तैमूरी सेना?''

यही नहीं खबरे यह भी आ रही हैं कि ''अयोध्या में घटी घटना की प्रतिक्रिया में बांग्लादेश और पाकिस्तान में मंदिरों के तोड़े जाने, हिंदुओं की दुकानें और घर लूटने, जलाने, बच्चों को आग में झोंकने, औरतों से बलात्कार करने की खबरें भी आ रही हैं।''[14]

शास्त्री जी अपनी पार्टी, मन्दिर, मस्जिद के मसले, जातिवाद के सन्दर्भ में मोहरा महमूद को ही बनाते हैं क्योंकि ''इसमें कोई सन्देह नहीं कि आर्थिक वैषम्य अधिकांश सामाजिक बुराइयों के मूल में है। साम्प्रदायिकता के संदर्भ में भी आर्थिक कारणों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।[15]''

जबकि लेकख अपना दृष्टिकोंण कुछ इस प्रकार व्यक्त करते हैं ''मेरा वश चले तो मैं मंदिर–मस्जिद दोनों को जमींदोज कराकर वहाँ बच्चों के खेलने के लिए पार्क बनवा दूँ।[16]''

शिवमूर्ति के इस उपन्यास में पाले एक प्रमुख चरित्र के रूप में आता है। इन्होंने 'पाले' के रूप में अपने इलाके के ''चैतू'' नामक एक लोकगायक को प्रस्तुत किया है। महमूद और पाले की कथा में कोई संगति नहीं है। पाले धर्म का आलोचक है। उसे धर्मायामों और धर्मांधों के विरूद्ध खड़ा किया गया है। वह देवी–देवताओं और ऊँची जातियों के खिलाफ बोलता है। जिसे सुनने के लिए हजार–डेढ़ हजार की भीड़ जुटती है।

लेखक के शब्दों में ''लगभग एक दशक पहले मेरे क्षेत्र में ''चैतू'' नाम के एक दलित लोकगायक का उदय हुआ। अपने भाषणों और गीतों के माध्यम से पिछले एक दशक में अकेले इस एक आदमी ने दलित उभार का जितना काम किया उतना अब तक कोई बड़े से बड़ा संगठन भी शायद ही कर सका हो।[17]'' रविभूषण इसकी समीक्षा करते हैं ''संगठन के प्रति शिवमूर्ति में आसक्ति और लगाव नहीं है। वे दलितों–पिछड़ों के बीच राजनीतिक संगठन से अधिक उपयोगी 'सांस्कृतिक संगठन' समझते हैं। यह दूसरी बात है कि वे किसी सांस्कृतिक संगठन में नहीं है।[18]''

पाले भ्रष्टाचार का भाण्डाफोड़ करना चाहता हैः–

''गुलाब गन्ध से गंधाता है जिला मेरा
शुरू होता है भाण्डाफोड़ सिलसिला मेरा''[19]

लेखक ढोलक के थाप पर झॉझ और मजीरा से झनकारते हैं।

चकाचकजी के शब्दों में :–

''अरे, हो, ओ–ओ–ओ
छूआछूत और जाति–पाति माँ
सगरी मनई जरत मरत है
ऊपर से जब बोलन लागैं
लागैं मानो फूल झरत हैं
हो–हा–हो–हो! बहुत सही! बहुत सही!''[20]

शिवमूर्ति के पाले के भाषण का अंश देखें तो–

''हम सारी बात वेद–पुराण और कलमा–कुरान से परमान देकर बोलते हैं धरम का रोजगार नई बात नहीं है। इस रोजगार में मुनाफा बढ़ाने के लिए जमकर मिलावट की गई है।''[21]

पाले की अयोध्या मंदिर मुद्दे पर कहे गये विचार से रामवादी पार्टी के लोग क्षुब्ध है। उसकी बड़ी निर्ममता से गला रेत कर हत्या कर दी जाती है। लेखक कहते हैं ''पाले (त्रिशूल) को मैंने पैदा नहीं'' किया.....वह तो समय–समाज की उपज है.....मैने तो सिर्फ उसे देखा और लिखा है.....मेरी पक्षधरता इतनी महत्वपूर्ण नहीं है, उसका इस समय समाज में होना ही दरअसल महत्वपूर्ण है.....मैं नहीं'' लिखता तो कोई और लिख देता, मगर लिखता जरूर! एक बात कहूँ? वह है ही लिखने के काबिल![22]''

यह उपन्यास धर्म, जाति, सत्ता, राज्य, साम्प्रदायिकता और आरक्षण के प्रसंग को उभारता है। संजय के शब्दों में ''सत्ता, राज्य, धर्म और जाति के छदम् को देखने और रचने की प्रक्रिया में ही 'त्रिशूल' का पाठ ज्यादा ठीक होगा। इसे इकहरी साम्प्रदायिकता विरोधी रचना के रूप में आज भी पढ़ना जैसा कि उस समय हुआ था, यथार्थ को जान–बूझकार नजरअंदाज करना होगा।[23]'' दूधिया लड़के के सहारे शिवमूर्ति केवल 'महमूद' को भगाते ही नहीं है दूधिया की वाणी आरक्षण के मुद्दे पर चीत्कार कर उठती हैः– ''जो बारहों वरन की जन्मभूमि है, जिसके लिए सचमुच मोर्चे पर कटना–मरना पड़ता है, वहॉ जाते .. ..। यहाँ कटे–मरें हम औ ये ससुर नकली जन्मभूमि के नाम पर फिरी का दूध पीने निकले हैं।''[24]

बच्चों के कोमल मानस में भेद–भाव का बीज बो दिया जाता है। वे जानते है कि मुसलमान बच्चे पकड़ने वाले, आग लगाने वाले, छुरा भोंकनेवाले होते हैं। शिवमूर्ति उपन्यास के आरम्भ में ही शास्त्री जी से वार्तालाप के दौरान स्पष्ट करना चाहते हैं ''किसी की धार्मिक भावर?ना से खिलवाड़ करना अच्छी बात तो नहीं है। [25]''

भारत अनेकता में एकता को समेटे हुए है। इस लोकतत्र की स्थापना विषमतामूलक जाति–व्यवस्था पर आधारित समाज और साम्राज्यवादी व तानाशाही हुकूमत के बावजूद हुई है। परन्तु आज खतरे बढ़ रहे हैं।

भारत का धर्म निरपेक्ष और लोकतांत्रिक चेहरा विकृत होने लगा है। हमारे महापुरूषों ने धर्मनिरपेक्ष भारत का निर्माण अपना लक्ष्य रखा था। जिसके तहत वे हर प्रकार की साम्प्रदायिकता का विरोध करते थे। आवश्यकता है इन महापुरूषों की दृष्टि, विचार का प्रचार–प्रसार। अन्यथा दुनिया भर के सभी धर्मों में संघर्ष–टकराव–हिंसा होती रहेगी। जाति और धर्म को आधार बनाकर अंग्रेजों ने सत्ता प्राप्ति के लक्ष्य को तो साधा ही। सन् 47 के बाद भारतवर्ष की लोकतांत्रिक राजनीति भी इसका भरपूर प्रयोग करती आ रही है। दत्तात्रय मुरूमकर ऐसे में बौद्ध मत के विश्वबंधुत्व की भावना पर बल देते हुए लिखते हैं इस कालावधि में लिखित 'आखिरी कलाम' हो या 'कितने पाकिस्तान' या 'त्रिशूल' हर उपन्यास में समता, स्वतन्त्रता, भाईचारे एवं सामाजिक न्याय की संकल्पना को लेकर चलने वाले बौद्धमत के विकास को जरूरी माना है। वह व्यक्ति की उन्नति, प्रगति में धर्म ईश्वर का रोड़ा कहीं नहीं रखता और मनुष्य को स्वयं 'अन्त दीपोत्सव' होने का सन्देश देता है। इसलिए आज युद्ध की नहीं बुद्ध की विश्व को आवश्यकता है।[26]''

शिवमूर्ति उपन्यास में कई स्थलों पर विश्वबंधुत्व की चर्चा करते हुए अंत में महमूद के उनके घर से चले जाने की घटना का संवेदनात्मक धरातल पर वर्णन करते

हुए'' लगता है महमूद के साथ ही हमारी युगों–युगों से संचित सहिष्णुता, उदारता और विश्वबंधुत्व की पूँजी आज इस घर को हमेशा–हमेशा के लिए अलविदा करके जा रही है।[27],,

अतः शिवमूर्ति का 'त्रिशूल' उपन्यास अपने तरह की भाषा और कथा–निर्मित को लकर देशव्यापी कई समस्याओं की प्रासंगिकता की चर्चा करते हुए विश्वबंधुत्व की ओर हाथ उठाती है।

निष्कर्ष

शिवमूर्ति द्वारा रचित 'त्रिशूल' उपन्यास में सन् 1992, 6 दिसम्बर की अयोध्या के मंदिर–मस्जिद विवाद की घटना का चित्रण किया गया है। उपन्यास के केन्द्र में महमूद है जिसकी कहानी द्वारा लेखक ने उपन्यास का ताना–बाना बुना है। मुसलमान महमूद का हिन्दु के घर काम करना कई प्रश्न खड़े करता है। मुहल्ले की संस्कृति उससे 'चेला' बनाकर अपना स्वार्थ साधती है। तत्कालीन राजनीतिक पार्टी में (रामवादी पार्टी) शास्त्री जी महमूद को जरिया बनाते हैं दंगे को फैलाने के लिए। शास्त्री जी का पोता अगवा कर लिया जाता है। और आरोपी महमूद को घोषित किया जाता है जबकि दंगे के और महमूद के मुहल्ले से चले जाने के बाद उनका पोता ननिहाल से ससुराल लौट आता है। उपन्यास में एक अन्य पात्र है पाले जो धार्मिक बाह्याडम्बरों पर खरी–खरी बात कहता है। जिसकी भाषण देने के कम में हत्या कर दी जाती है। लेखक महमूद को बचाने की कोशिश करते हैं और महमूद भी अपने, मालिक पर आँच नहीं आने देना चाहता। परन्तु इस क्रम में महमूद अपने घर न जाकर कहाँ जाता है और क्यों जाता है (काला पहाड़ की शागिर्द में) शिवमूर्ति इसे स्पष्ट करना चाहते हैं। धर्म, जाति, आरक्षण, साम्प्रदायिकता आज से सभी मुद्दे गहराते चले जा रहे हैं और इन सभी में मोहरा बनाया जाता है आर्थिक दृष्टि से असम्पन्न व्यक्ति को। दंगे में जान–माल की पूर्ति के साथ मानवीय भावनाओं का हनन किया जाता है। प्राचीन काल से ही विश्व बंधुत्व की भावना को लेकर चलने वाले भारतवर्ष के लोकतंत्र में ये बेलें फैलती जा रही है। इस उपन्यास में शिवमूर्ति ने जाति, धर्म, साम्प्रदायिकता और आरक्षण के मुद्दे को प्रासंगिक करने का प्रयास किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *सम्पादक 'मयंक खरे;, मंच, दिल्ली 2011 पृ0 47*
2. *राणा डॉ0 मंजुला 'दसवें दशक के हिन्दी उपन्यासों में साम्प्रदायिक सौहार्द, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2008 पृ0 73*
3. *शिवमूर्ति, 'त्रिशूल', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1995 पृ0 45*
4. *सम्पादक मयंक खरे, मंच दिल्ली 2011 पृ0 47*
5. *शिवमूर्ति, 'त्रिशूल' राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1995 पृ0 36*
6. *सम्पादक राजेन्द्र यादव, 'हंस', दिल्ली, दिसम्बर 1993, पृ0 11*
7. *पृ0 'हंस' दिसम्बर 1993 पृ0 11*
8. *शिवमूर्ति, 'त्रिशूल' राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1995, पृ0 40*
9. *वही पृ0 5*
10. *राणा डॉ0 मंजुला 'दसवें' दशक के हिन्दी उपन्यासों में साम्प्रदायिक सौहार्द, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, 2008 पृ0 84*
11. *शिवमूर्ति, 'त्रिशूल' राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली, 1995 पृ0 136*
12. *वही पृ0 36*
13. *सम्पादक, 'मयंक खरे' मंच, दिल्ली 2011 पृ0 75*
14. *मुरूमकर दत्तात्रय, 'हिन्दी साहित्य में वर्णित साम्प्रदायिकता का स्वरूप, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली 2012 पृ0 22*
15. *शिवमूर्ति, 'त्रिशूल' राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली 1995 पृ0 31, 32*
16. *राणा डॉ0 मुजुला 'दसवें' दशक के हिन्दी उपन्यासों में साम्प्रदायिक सौहार्द, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, 2008, पृ0 73*
17. *शिवमूर्ति, 'त्रिशूल' राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1995, पृ0 30*
18. *सम्पादक मयंक खरे, मंच, दिल्ली 2011, पृ0 218*
19. *वही पृ0 48*
20. *शिवमूर्ति, 'त्रिशूल' राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1995, पृ0 62*
21. *वही, पृ0 73*
22. *वही, पृ0 66*
23. *सम्पादक 'मयंक खरे', मंच दिल्ली 2011 पृ0 156*
24. *वही, पृ0 75*
25. *शिवमूर्ति, 'त्रिशूल' राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1995, पृ0 51*
26. *वही, पृ0 6*
27. *मुरूमकर दत्ताश्रय, 'हिन्दी साहित्य में वर्णित साम्प्रदायिकता का स्वरूप' प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, 2012 पृ0 37*
28. *शिवमूर्ति, 'त्रिशूल', राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1995, पृ0 135*